प्रवचन नं. ४० गाथा-११ ता. २२-७-७८ शनिवार अषाढ वदी-२ सं.२५०४

वस्तु का विश्वदर्शन, यह जैनदर्शन, यह गाथा उसकी प्राण है, सूक्ष्म बहुत सूक्ष्म। यहाँ कहते हैं, देखो ! यहाँ आया, यहाँ शुद्धनय कतकफल के स्थानपर है। है ? अंतिम चार पंक्तियाँ है। क्या कहते हैं ? कि यह आत्मा जो वस्तु है यह पूर्ण अतीन्द्रिय आनंदघन है, त्रिकालसत् है और इसमें चिदघन, ज्ञानानंद का यह पिण्ड है, आनंद का यह ढ़ेर है इसे यहाँ ज्ञायकभाव, त्रिकाली ज्ञायकभाव, जानन स्वभावभाव, उसे यहाँ त्रिकाली आत्मा कहते हैं, उसकी दृष्टि करना... आहाहा ! - ऐसा त्रिकाली ज्ञायक जो परम सत्य प्रभु स्वयं पूर्णानंदका नाथ परम सर्वोत्कृष्ट प्रभु है। आहाहा ! उसका अन्य कर्त्ता दूसरा प्रभु है ही नहीं। स्वयंभू है। ऐसी जो वस्तु... उसे राग के भाव से, संयोग के भाव से, पर्याय की एक समय की दशा, उससे भी अंतर वस्तु जो पूर्ण-पूर्ण है, उसके ऊपर दृष्टि करना और ज्ञायकभाव का अनुभव करना, उसका नाम सम्यग्दर्शन और धर्म की पहली सीढ़ी है। आहाहा ! समझ में आया कुछ !

जैसे पानी में मैल होता है, उसमें निर्मली एक औषधि होती है। यह निर्मली औषधि डालने से मैल और पानी दोनों भिन्न हो जाते हैं। इसीप्रकार यह आत्मा आनंद का नाथ प्रभु, स्वयं सच्चिदानंद स्वरूप है, उसमें जो यह पुण्य और पाप के भाव, हिंसा, झूठ, चोरी, विषय भोग वासना और दया, दान, भक्ति, पूजा, व्रतादि के भाव यह सभी मलिनभाव है। यह पानी में जैसे कीचड़ का मलिनपना है, इसीप्रकार आत्मा के त्रिकाली स्वभाव में यह वस्तु नहीं। परंतु उसकी वर्तमान पर्याय में जो मलिन भाव है। आहाहा ! यह शरीर वाणी तो जड़ है यह तो इसमें है ही नहीं, यह तो मिट्टी है। वाणी, शरीर, कर्म, परवस्तु (यह) इस आत्मा में है ही नहीं। परंतु इसकी दशा (पर्याय) में होनेवाले पुण्य और पाप के मलिनभाव... चाहे तो दया का दान का भक्ति का पूजा का भगवान के स्मरण का भाव हो परंतु (यह) भाव राग है, और मलिन है। आहाहा !

यह मलिन भाव और आत्मा ज्ञायकभाव, यह जैसे पानी में मैल है और निर्मली औषधि डालने से अलग हो जाती है, उसीप्रकार आत्मा में... सूक्ष्म बात है बापू! अनंत काल में इसने किसी दिन (दरकार) की, नहीं अनंतकाल चौराशी के अवतार... चौराशी लाख योनियों के अवतार अनंत अनंत किये। आहाहा ! चौराशी लाख योनि कहीं जाती है न ? इसमें एक एक में अनंतवार जन्मा है। आहाहा ! भूल गया।

यहाँ कहते हैं कि ऐसे जन्ममरण के कारणरूप जो भाव... आहाहा ! पुण्य और पाप के जो भाव, यह मलिन भाव हैं और भगवान अंदर जैसे जल निर्मल है, ऐसे इसका स्वभाव शुद्धज्ञानानंद, शुद्ध परम ईश्वररूप, परमशांतस्वरूप, परमवीतराग स्वरूप - ऐसा इसका त्रिकाल स्वरूप है। आहाहाहा ! समझ में आया ? इसके ऊपर नजर करते ही राग और आत्मा दोनों भिन्न हो जाते (हैं)। आहाहा ! है ? शुद्धनय को कतकफल अर्थात् निर्मल औषधि... यह पानी में जैसे मैल होता है और निर्मली औषधि डालने से मैल और पानी भिन्न हो जाता है, इसीप्रकार भगवान आत्मा सच्चिदानंद शुद्ध त्रिकाली स्वरूप है, इसमें पुण्य और पाप के भाव यह मैल हैं, इससे भेदज्ञान करने से उससे भिन्न हमारी चीज ज्ञायकभाव है, यह शुद्धनयका विषय - त्रिकाली ज्ञायक भाव का अनुभव करने पर... आहाहा ! यह शुद्धनय कतकफल के स्थान पर... इसलिए शुद्धनयका आश्रय करते हैं। बहुत सूक्ष्मबात है बापू ! आहा !

यह बाहर में काम करते हैं हम, यह सभी मिथ्यादृष्टि के भाव हैं समझ में आया ? यह धंधा पानी और... सुमनभाई ! सच्ची होगी यह सभी तुम्हारी नौकरी बोकरी का... सभी यह करोड़ो के कारखाने चलाना एवं यह हम करते हैं (श्रोता :- नोकरी का अर्थ ही नो....करी) नो....करी यह तो है। परंतु यह काम कारखाना एवं पैसा उघरानी का काम करते हैं, कहीं ! यह एकदम मिथ्यादृष्टि झूठी दृष्टि का पाखण्ड है। आहाहा !

क्यों ? कि प्रभु आत्मा यह पर द्रव्य से भिन्न चीज है। यह भिन्न वस्तु, भिन्नका कुछ भी कर सके यह तीनकाल में नहीं। (श्रोता :- शेठका काम नौकर न कर सके ?) नौकर भी करे नहीं और शेठ भी करें नहीं, कौन करता था धूल... शेठ कहना किसे ? अबजो रूपया करोडो रूपया हों अतः शेठ कहना ? शेठ तो हेठ (नीचे) उतर गया है। पर को अपना मानकर... शेठ तो उसे कहें शेठ अर्थात श्रेष्ठ, यह राग के विकल्प से भिन्न होकर आत्मा की दृष्टि करे, अनुभव करे यह शेठ है। आहाहा ! (श्रोता :- तत्व की दृष्टि से यह श्रेष्ठ कहलाये परंतु लौकिक दृष्टि से शेठ कहलाता है न ?) लौकिक अर्थात पाखण्ड दृष्टि ! लौकिक अर्थात क्या ? आहाहा ! समझ में आया ?

यह यहाँ कहते हैं। `यह शुद्धनय का आश्रय करता है' अर्थात त्रिकाली आनंदकंद प्रभु ध्रुव अविनाशी आत्मा, उसका जो आश्रय करता है, है ? तीसरी पंक्ति है, है ? हिम्मतभाई ! तीसरी पंक्ति है कि नहीं उन्हें मिलती नहीं उन्हें ? नजदीक वाले बताओ उन्हें कोई उन्हें कभी पुस्तक पढ़ी नहीं। बाहर की सभी उठापटक में। आहाहा ! यहाँ कहते हैं कि यह प्रभु अंदर जो चैतन्यस्वरूप है, अतीन्द्रिय अनंत स्वभाव के

सागर से भरा हुआ तत्व है प्रभु ! आहाहा ! यह सच्चिदानंद सत् शाश्वत चिद और आनंद - ज्ञान और आनंद का यह भण्डार है। आहाहा ! इसका जिसने आश्रय किया, इसका जिसने अवलम्बन लिया, इसको जिसने आधार बनाया... दुनियाँ की कोई क्रिया, जड़ आदि है इसके साथ कुछ संबंध नहीं और यह पुण्य-पाप के भाव होते है यह भी विकारी मैल (है) आहाहा ! निर्मलानंद प्रभु, जिसका स्वभाव निर्मल चैतन्य (है) जैसे जल निर्मल है, इसीप्रकार कीचड़ की मलिनता से पर्याय में मलिनता दिखती है। जल तो निर्मल है, इसीप्रकार भगवानआत्मा चैतन्य प्रकाश का पुंज निर्मल है। चैतन्य का प्रकाश, चैतन्यप्रकाश, जानने देखनेवाला प्रकाश, उसका यहसमूह निर्मलानंद है। आहाहा ! यह इसका आश्रय करे, संयोग का लक्ष्य छोड़ दे, अंदर दया दान के विकल्प उठें उसका लक्ष्य छोड़ दो यह बंध का कारण-दुःखका कारण है। एससमय की वर्तमान दशा चलती अवस्था हालत उसका भी लक्ष्य छोड़ दो। आहाहा ! और सच्चिदानंद ध्रुव वस्तु, ध्रुव है अंदर भगवान नित्य, नित्यानंद प्रभु है। आहाहा ! उसका जो आश्रय करे, उसीका जो अवलम्बन ले, उसकी ओर जो पर्याय ढल जाये। आहाहा ! उसे अवलोकन करनेवाली यह शुद्धनय का आश्रय करे त्रिकाली वस्तु का, और उसे ही देखे। आहाहा ! पूर्णानंद प्रभु पूरा अंदर है, उसे जो देखे, वह सम्यग्दृष्टि है। वह अभी धर्म के प्रथम सोपानवाला सम्यग्दृष्टि है, सुनाई देता है कि नहीं, हिम्मतभाई ! सुनाई देता है न ? दोनों कानों से बहरे है, उनके, ख्याल है न। धीरूभाई आये है, मिले ? यह हिम्मतभाई आये हैं धीरूभाई वढवाण... आहाहाहा !

यहाँ कहते हैं, तुमने कभी किया नहीं, सुना नहीं प्रभु ! आहाहा ! या तो पर की दया पालना और भगवान की भक्ति करना, एवं व्रतपालना और यह सभी राग की क्रियायें हैं बापू ! यह कही तुम्हारी धर्म क्रिया नहीं। (श्रोता :- लोक सेवा करने में तो कुछ हर्ज (हानि) नहीं है ?) लोकसेवा कौन करता था, मूढ ? अज्ञानी मूर्ख यह तो पहले कहा न... पर की सेवा कर सकता हूँ यह मान्यता ही मिथ्या पाखण्ड है। आहाहा ! (श्रोता :- अपनी दृष्टि से वह है। अज्ञानी की दृष्टि से तो अज्ञानता में यह चाहे जैसा माने इससे कहीं सत्य हो जाये ? आहा...हा ! एक अंगुली यह हिले, आत्मा इसे हिला सकता नहीं। यह जो जड़ मिट्टी है, प्रभु तो चैतन्यस्वरूप है, जानने देखनेवाला, ज्ञान चक्षु है, यह होनेवाले को जाने कि होनेवाले को करे... यह आत्मा में है ही नहीं कभी भी आहाहाहा ! समझ में आया ?

यह गाथा तो सार में सार है, उसका एकदम मक्खन है। आहाहाहा !

ज्ञान, ज्ञान अर्थात जानने का स्वभावका पिण्ड प्रभु ! उसमें तो पुण्य और पाप के राग भी नहीं। परंतु जो वर्तमान दशा है वर्तमान पर्याय यह भी जिसमें नहीं।

यह तो परिपूर्ण आनंद और परिपूर्ण ज्ञान एवं परिपूर्ण शांति एवं परिपूर्ण वीतरागता, परिपूर्ण ईश्वरता के स्वभाव से भरा हुआ प्रभु है। आहाहाहा ! इस पामर को प्रभुता कैसे बैठे (सम्मत हो) ? समझ में आया ? आहाहा !

ऐसा जो भगवान, सर्वोत्कृष्ट तत्त्व प्रभु स्वयं है। आहाहा ! जिसकी सत्ता में, जिसकी उपस्थिति में, यह क्या है - ऐसा ज्ञात होता है यह सत्ता जो चैतन्य स्वरूप है। जिसकी भूमिका में, जिसकी मौजूदगी में, यह शरीर है, यह कर्म है, यह राग है यह है यह है - ऐसा जिसकी सत्ता में, अस्तित्व में ज्ञात होता है, यह जाननेवाला आत्मा है यह ज्ञात हो जो वस्तु यह उसकी नहीं। आहाहा ! छोटाभाई ! ऐसी है यह बात, अनंत काल हुआ भाई, अनंत काल से भटक रहा बिना ज्ञान भगवान। क्रियायें करी अनंत बार, व्रत और तप और भक्ति और पूजा और... करोड़ो के मंदिर बनाये और... इसमें धूल में कुछ नहीं इसमें। आहाहाहा ! इसमें रागकी मंदता हो तो कदाचित पुण्य हो। यह पुण्य तो भव है। आहाहा !

यहाँ तो प्रभु कहते हैं... सर्वज्ञ द्वारा कहा हुआ तत्त्व संत आड़तिया होकर जगत के समाने प्रसिद्ध करते हैं। आहाहा !

चैतन्य प्रकाश की मूर्ति जो आत्मा, उसमें तो वर्तमान पुण्य-पापका भाव भी नहीं और जो वर्तमान उसकी दृष्टि करे, यह दृष्टि भी इसमें नहीं। आहाहा ! क्या कहा यह ? भाई मार्ग कोई अलग जातिका है। अरे दुनियाँ को मिला नहीं यह बाहर में भटक भटक करते हैं, प्रथम तो व्यापार से फुरसद नहीं, बाईस घन्टे पाप में, पत्नी, बच्चे, व्यापार। कमाना, कारखाना चलाना और इसमें बाईस घन्टे पाप, घन्टा दो घन्टा मिले वहाँ ऊपर से कुगुरू लूट लें। व्रत करो, हमारी भक्ति करो, हमको दान दो तुम्हारा कल्याण होगा। मारडाला। धूल में नहीं कल्याण सुनो न ! आहाहा ! समझ में आया ?

यहाँ तो कहते हैं। जिसकी सत्ता में पूर्णज्ञान आनंदादि और पूर्ण शांति... शांति... शांति यह शांति... शांति तीनवार कह परंतु शांति... शांति... शांति... शांति... शांति यह अनंत अनंतबार शांति कहो तो वहाँ शांति का पार नहीं, इतनी अंदर शांति भरी है।

क्या कहा ? समझ में आया कुछ इसमें ? भगवान आत्मा यह चिदानंद प्रभु यह पुण्य-पाप के राग से तो भिन्न है परंतु एक समय की पर्याय से भिन्न है - ऐसे तत्त्वकी अंतरंग दृष्टि देनेपर... दृष्टि है वह पर्याय है। उसे अवलोकन करनेवाली दशा पर्याय है, पर्याय अर्थात अवस्था, वर्तमान हालत, फिर भी वह अवलोकनदशा उसमें नहीं, उसे अवलोकन करती है। आहाहाहा ! क्या कहा यह ! आहाहा ! सूक्ष्म बात हैं बापू ! धरम की। यहाँ तो साधारण व्यक्ति ऐसे भक्ति करी और पूजा की

और व्रत पाला और हो गया धर्म ! धूलमें नहीं धरम सुनो न ! मर गया अनंतबार।

(श्रोता :- जो कुछ नहीं करते उनसे तो अच्छे है ?) उनकी अपेक्षा तो भटकने का करते हैं यह। आहाहा ! गाँव में अस्पताल बनवा दे, मंदिर बना देना, पैसो की उगाही वसूलना यह सभी पाप के भाव हैं। (श्रोता :- पुण्य की नहीं ?) पुण्य भी नही - ऐसा कहा न अर्थात, उसे करदें कर दूँ, कर दूँ, कर्ता होता है वह मर जाता है अंतर आत्मा से। ***ज्ञाता चैतन्यमूर्ति प्रभु जगत की आंख है यह तो जाननेवाला इसे पर का कर्ता सिद्ध करना यह चैतन्य का खून करता है। यह अपने चैतन्य की हिंसा करता है।*** आहाहाहा !

यह तो ठीक, परंतु अंदर राग करे न ? दया, दान, व्रतका राग होता है उसे करे तो भी आत्मा का मरन होता है वहाँ। आहाहाहा ! क्योंकि राग है वह स्वरूप से विपरीत है और वह राग मेरा है और मैं करता हूँ, यह स्वरूप की हिंसा है। कठिन बात है बापू ! सारी दुनियाँ यों की यों भटकती है चौराशी के अवतार में, मनुष्यपना मिला, पांच इन्द्रियाँ मिलीं, आहाहा ! इसमें जैन कुल में अवतार मिला, जैनवाणी मिली... अनंतबार, परंत यह वस्तु क्या है उसको समझने की किंमत नहीं की। पशु की तरह अवतार गुमाया, समझ में आया ? आहाहा !

यहाँ कहते हैं `शुद्धनय करा आश्रय करते हैं' अर्थात कि त्रिकाली आनंद का नाथ प्रभु ! अस्ति अस्ति विद्यमान पदार्थ ध्रुव अविनाशी प्रभु है अंदर। अविनाशी - ऐसा जो त्रिकाली ध्रुव उसका जो आश्रय - अवलम्बन करता है, `वही सम्यक् अवलोकन कर्ता होने से सम्यग्दृष्टि है' आहाहाहा ! पूर्ण चैतन्यस्वभाव, जिसका स्वभाव है वह पूर्ण ही होता पूर्ण अतीन्द्रिय आनंद का स्वभाव, स्वभाव हो वह पूर्ण ही होता है। अतीन्द्रिय शांति शांति शांति... अकषाय वीतराग स्वभाव शांति ! यह भी पूर्ण है। आहा..हा !

ऐसे पूर्णानंदका आश्रय करे अर्थात् कि उसका अवलम्बन ले अर्थात् कि उसे अवलोके, आहाहा ! जो ज्ञान की वर्तमान दशा, पूर्णानंद का नाथ उसे अवलोके, ***अवलोकन करनेवाली पर्याय जाननेमें आती है वह वस्तु में प्रवेश करती नहीं। उसी प्रकार अवलोकन करनेवाली पर्याय में अवलोकन योग्य वस्तु आती नहीं*** अरे..! कठिन मार्ग भाई ! आहाहा ! अंतर के जन्ममरण रहित होने की पद्धति बहुत सूक्ष्म है बापा ! आहाहा ! चौराशी के अवतार तो अनंत किया... अभी जिसे मिथ्या श्रद्धा है इसे अनंत भव उसके गर्भ में विद्यमान हैं भटकने के। आहाहा ! यह पशु में जायेंगें कौये कुत्ते में जायेंगें। यहाँ अरबपति हो और मांस दारु आदि न खाता हो और ऐसी ममता धंधे की और इसकी यह मरकर सभी पशु में जानेवाले है, पशु में अवतार लेगें, क्योंकि उनको विकारी भाव की तिरछापना बहुत किया, तिरछापना टेडापना, उसे यह

मनुष्य शरीर जो खड़ा होता है और गाय, भैंस, गिलहरी आदि इसप्रकार तिरछा है। यह वक्रता करेंगे तो तिरछे शरीर में अवतार लेंगे। आहाहा ! तिरछापना समझे ? टेड़ापना। गिलहरी, गाय, भैंस, घोडा, हाथी आदि इसप्रकार तिरछा है न। मनुष्य इसप्रकार खड़ा है और वह तिरछे हैं। आहाहा ! जिसने मांस, दारु आदि खाये हैं वे तो मरकर नीचे नरक में जायेंगें। - ऐसा भव भी अनंत बार किये हैं परन्तु जिसके ये (भाव) न हो और क्रोध मान माया लोभ आदि कषायों के तीव्र भाव किए है और इसमें ही रचा पचा है... उसकी कषाय की तीव्रता की आड़ के कारण, जिसका आत्मा तो उल्टा हुआ परंतु उसका जन्म होगा वहाँ शरीर तिरछा मिलेगा उसे। तिरछा टेड़ा शरीर मिलेगा। वह जीव सीधा नहीं हो सके। सूक्ष्म बातें बापू। उसने कींमत की नहीं भाई। आहाहा !

यहाँ से भविष्य में अनंतकाल रहना है। आत्मा नष्ट हो - ऐसा है ? आत्मा तो अविनाशी है। तब यहाँ से छूटकर भी रहनेवाला है न ? कहाँ रहेगा ? जिसने - ऐसा माना है कि मैं दया दान का राग मेरा, यह पर का कर सकता हूँ। ऐसे मिथ्यात्व भाव के (फलमें) भविष्य में रहेगा, दुःखमें रहेगा, दुःखमें। आहाहाहाहा !

क्योंकि, भगवानआत्मा तो अविनाशी है, यह कही नष्ट हो - ऐसा नहीं, और लोग - ऐसा कहते हैं न देह छूटती तब (कहते) जीव गया, यह जीव गया ! पल्स (नाडी) हाथ नहीं आती, यह जीव गया तब जीव था वह गया न ? और पीछे गया वहाँ रहेगा कि नहीं ? आहाहा !

यह जीव कहाँ रहेगा जाकर ? यह विपरीतता सभी की है, यह पर का कार्य हमने किया और - ऐसा किया और परको (दूसरो) अभिनंदन दिया और इकठा करके उत्सव किया ! तुमने तो बड़ा काम किया और तुमने पचास लाख एकत्र किये और... यह आंध्रप्रदेश में देखो होता है न ? आंध्रप्रदेश में बड़ा उलट पलट हो गया न (भूकम्पसे) आंध्रप्रदेश के लिए पांच-पांच, दस-दस लाख एकत्र करते है व्यक्ति वह जहाँ देते वहाँ तो। आहाहा ! तुमने तो निहालकर डाला - ऐसा जगत बोलता है धूल में नहीं ! अब सुनो न। अब ऐसे कषायों के अभिनंदन देनेवालो को भी मिथ्यात्व का पाप लगता है और यह अभिनंदन जो लेते हैं, मुझे मेरी तारीफ करते है - ऐसा मानते हैं वह भी मिथ्यात्व अज्ञान का सेवन करते हैं। आहाहाहा !

यहाँ तो प्रभु सर्वज्ञ त्रिलोकनाथ जिनेश्वरदेव परमेश्वर त्रिकालज्ञानी, जिसे त्रिकाल का ज्ञान है यह परमात्मा कहते हैं यह संत, आड़तिया होकर जगत के पास प्रसिद्ध करते हैं माल तो प्रभु के घर का है। आहाहाहा !

यह शुद्धनय का अवलम्बन लेते हैं आश्रय `वह ही' दूसरा नहीं - ऐसा। वर्तमान

पर्याय का आश्रय करे, रागका आश्रय करे यह बिलकुल मिथ्यादृष्टि है। आहाहाहा ! उसका ही सम्यक अवलोकन करता होने से सम्यग्दृष्टि है। आहाहा ! परंतु दूसरा सम्यग्दृष्टि नहीं - ऐसा लेना। कोष्टक में कहा कि `अशुद्धनय का सर्वथा आश्रय करता है...' अर्थात क्या कहा ? कि त्रिकाली ज्ञायक का आश्रय करता है, उसे भी पर्याय में अशुद्धता है - ऐसा लक्ष्य है। लक्ष्य है। अवस्था में राग है - ऐसा लक्ष्य है परंतु आश्रय इसका (ज्ञायकका) करते हैं, और इसका सर्वथा लक्ष्य ही नहीं, जिसे अशुद्धता है ही नहीं पर्याय में, यह तो भूल करते हैं। अशुद्धनय का सर्वथा आश्रय करते हैं इसका अर्थ हुआ कि सम्यग्दृष्टि भी कथंचित् अशुद्ध का आश्रय करता हैं अर्थात कि पर्याय में अशुद्धता अपूर्णता है - ऐसा इसे ख्यालमें है फिर भी आश्रय करता है त्रिकाली का। समझ में आया ?

अरे ! ऐसी कहाँ फुरसत होती है। आहाहा ! अरे बड़े राजा और बड़े करोडपति मरकर यह बकरी के पेट में बच्चे होते यह छिपकलीके पेट में, आहाहाहा ! कितने ही तो मकड़ी होते, या तो भोंरे होते अरे ! प्रभु ! तुम्हे खबर नहीं बापू ! आहाहा! जिसने एक ही प्रभु का आश्रय लिया वह तो एक ही सम्यग्दृष्टि और धर्मी है। शेष जितने पर का आश्रय लेकर रुके है वह सभी मिथ्यादृष्टि है।

तब यहाँ अशुद्धनय का सर्वथा आश्रय का अर्थ कि, `ज्ञानी को भी अशुद्धनय का आश्रय है' - ऐसा अंदर में आता है... इसका अर्थ इतना... यह १४ वी गाथा में आता है, अर्थ में। स्व का आश्रय करने की बात एक ही है, फिर भी पर्याय में अशुद्धता है इतना लक्ष्य (ख्याल) तो होना चाहिए। पर्याय है, अशुद्धता है यह लक्ष्य होना चाहिए। फिर उसका आश्रय लेना नहीं, परंतु अशुद्धता बिलकुल है ही नहीं, पर्याय में तब तो यह लक्ष्य चूक जाता है तब अशुद्धता टालना यह भी रहता नहीं। आहाहाहा ! समझ में आया ?

समझ में `कुछ' आता है न ? समझ गया हो तब तो हो गया... यह तो किस पद्धति से किस रीति से कहा जाता है, किस तरफ झुकाव होता है इतना समझ में आता है ? आहाहा ! जो अशुद्धनय का... अर्थात कि दूसरे सम्यग्दृष्टि नहीं। आहाहा ! जिसने पर्याय का और राग का और निमित्त का आश्रय लिया है वह सम्यग्दृष्टि नहीं, वह मिथ्यादृष्टि अज्ञानी है। आहाहा ! यह चार गति में नरक निगोद में जानेवाले भावों का सेवन करते हैं यह। आहाहाहा !

`**इसलिए कर्म से भिन्न आत्मा को देखनेवालो को**'... है अंतिम पंक्ति ? पुण्य और पाप के भाव दया, दान, व्रत, भक्ति, पूजा का भाव यह कर्म है विकार है। आहाहाहा ! उससे भिन्न देखनेवालों को ***यह राग की क्रिया के कार्य से प्रभु भिन्न***

है, क्योकि इससे रहित हो सकता है यदि सहित हो तब रहित हो सके नहीं। वास्तव में द्रव्य-वस्तु राग सहित है ही नहीं, इसलिए राग रहित हो सकती है। आहाहा ! समझे कुछ ?

वह कर्म से भिन्न राग से भिन्न, यह विकल्प उठते हैं... गुणी भगवान अनंत गुणों का धनी और उसका ज्ञान आनंद - ऐसा गुण - ऐसा जो भेद उठे विकल्परूपी राग, आहाहा ! उससे भी भिन्न, कर्म से भिन्न देखनेवाले, ऐसे राग से भिन्न जाननेवाले...

अरे ! ऐसी बाते अब कहाँ ? चौबीस घन्टे झंझट में रुके हैं अब उन्हें यह कभी देखा नहीं समझना ! जाना नहीं, वहाँ इसे अवलोकन करने ले जाना ! बापू ! इसका प्रयत्न अनंतगुना है। सुमनभाई ! आहाहा !

अभी तो बाहर में विरोध होता है संप्रदाय में तो ! पूरी बात (विपरीत)। सभी खबर है न ! संप्रदाय में कोई व्रत में धर्म मनायें, कोई दया को मनावे कोई भगवान की भक्ति को धर्म मनावे ! (साधक को भी) होता है, शुभ भाव होता है। पूर्ण वीतरागता न हो, तब तक आत्मा का अवलम्बन होने पर भी शुभ राग आये, परंतु यह है बंध का कारण। यह धर्म का कारण कि मोक्ष का कारण नहीं। आहाहा !

यहाँ तो कहते हैं `**कर्म से भिन्न आत्मा को देखनेवालो को**' आहाहा ! कर्म शब्द से यहाँ राग लेना। राग से भिन्न प्रभु को देखनेवालो को `**व्यवहारनय अनुसरण करने लायक नहीं**' यह राग का अवलम्बन लेने योग्य नहीं। आहाहाहाहा ! यह दया दान और व्रत के भाव अनुसरण करने योग्य नहीं। आहाहाहा ! समझे कुछ... ?

यह ग्यारहवी गाथा हुई। अब इसका भावार्थ, वह संस्कृत टीका थी। टीका में बहुत गम्भीरता भरी है, उसे प्रचलित भाषा में थोड़ा भावार्थ समझाते है।

(भावार्थ :-) यहाँ व्यवहार को अभूतार्थ, अर्थात ? ***कि वर्तमान राग होता है, दया दान को, उसे और इस राग को जाननेवाली (ज्ञान की) वर्तमान पर्याय को अभूतार्थ कहा। `यह है नहीं' उसमें, है अवश्य, परंतु वस्तु की दृष्टि कराने, वस्तु में नहीं इसलिए उसमें नहीं - ऐसा कहा है। यह पर्याय ही नहीं राग ही नहीं। आहाहा ! क्योंकि इसका आश्रय करने लायक नहीं। आहाहाहा ! एक समय की जो दशा है जानने की दशा... जाननेवाला त्रिकाल प्रभु है परंतु इसकी वर्तमान दशा जो पलटती हलचल होती दशा... विचाररूप (ज्ञान की) यह यहाँ नहीं - ऐसा कहा। `नहीं' कहा गौण करके `नहीं' - ऐसा कहा है - ऐसा कहते हैं देखो ! अभूतार्थ (कहा)***

और शुद्धनय को भूतार्थ कहा है। त्रिकाली वस्तु को सत्य कहा और पर्याय और राग को असत्य कहा। जिसका विषय विद्यमान न हो... जिसका विषय ही होता नहीं, असत्यार्थ हो, उसे अभूतार्थ कहा है; यह अभूतार्थ की व्याख्या की। पहले गाथा

का अर्थ है न उसकी व्याख्या कहते हैं। नय अर्थात जानने की दशा। एसमें एक व्यवहारनय अर्थात वर्तमान पर्याय और अवस्था को और राग को जाने यह व्यवहारनय; और यह ज्ञान की पर्याय शुद्ध त्रिकाल को जाने यह निश्चय (नय) शुद्धनय।

यहाँ व्यवहारनय को झूठा कहा अभूतार्थ कहा, और शुद्धनय को सत्य कहा। है - ऐसा कहा। अब उसका विषय अविद्यमान हो - असत्यार्थ हो... व्यवहार का विषय `नहीं' असलिए इसे अभूतार्थ कहा है। किस अपेक्षा से कहेंगे, उसे अभूतार्थ कहा है। आहाहाहा ! क्या कहा यह ? व्यवहारनय अर्थात वर्तमान पर्याय और दया दान का राग, उसे जाननेवाली जो नय है, ज्ञान का अंश, व्यवहार। उसे यहाँ झूठा कहा। `नहीं' - ऐसा कहा अभूतार्थ है - ऐसा कहा। और त्रिकाली वस्तु को जो सत्य है न भूतार्थ है - ऐसा कहा। अब इसका अर्थ कि जिसका विषय नहीं, उसे अभूतार्थ है न ? आहाहा ! असत्यार्थ कहते हैं। व्यवहारनय को अभूतार्थ कहने का आशय - ऐसा है - अब कहते हैं... इसकी वर्तमान पर्याय और राग को (व्यवहारनय) झूठा है नहीं (असत्यार्थ) है - ऐसा कहने का आशय - ऐसा है (के) - शुद्धनय का विषय तो अभेद है। आहाहा !

क्या कहा ? अंदर सम्यग्दृष्टि जीव, धर्म की प्रथम, सीढ़ीवाला जीव, उसका विषय तो त्रिकाली अभेद अखण्ड है। त्रिकाली आनंद का नाथ प्रभु, नित्यानंद प्रभु यह शुद्धनय का विषय है। आहाहा ! यह अभेद है। त्रिकाली ? वस्तु है उसमें पर्याय और राग का भेद नहीं। अरे ! ऐसी बातें ? समझना।

शुद्धनय का विषय अर्थात शुद्धनय का लक्ष्य जो है वह अभेद है, एकाकाररूप है। आहाहाहाहा ! सम्यग्दर्शन की, प्रतीति जो पर्याय, उसका विषय अभेद है। त्रिकाली एकरूप वस्तु है और वह एकाकार एक स्वरूप है। भेद और अनेकता इसमें नहीं। यह तो मंत्र है प्रभु ! आहाहाहा ! अभी तो सुनना मुश्किल हो गया - ऐसा है, जहाँ देखो वहाँ धमाल ! धमाल ! धमाल ! व्रत करो और उपवास करो एवं भक्ति करो न... पूजा करो न... यह बड़ी रथ यात्रा निकालो गजरथनिकालो... हाथी को निकालते है न गजरथ, पाँच-पाँच लाख खर्च करके। अरे ! बापा यह तो सभी पर की वस्तु है, इसमें कदाचित राग का भाव मंद हो तब पुण्य है, पुण्य है वह भव है और भव है वह संसार है। आहाहाहा ! समझ में आया ?

यहाँ तो पण्डितजी - ऐसा स्पष्टीकरण करते हैं कि भाई यहाँ व्यवहारनय को झूठा कहा अर्थात वर्तमान पर्याय को, राग को `नहीं' - ऐसा कहा और त्रिकाली वस्तु है उसे सत्य कहकर `है' - ऐसा कहा। इसका अर्थ क्या ? कि व्यवहारनय का विषय अभूतार्थ कहा, इसका अर्थ कि जिसका विषय नहीं है ? उसे अभूतार्थ

कहते हैं, व्यवहारनय को अभूतार्थ कहने का आशय - ऐसा है कि शुद्धनय का विषय अभेद, एकाकाररूप, नित्यद्रव्य है। नित्यद्रव्य प्रभु कायम रहनेवाला भगवान, कायम भगवान अनादि है और अनंतकाल जैसे का तैसा रहनेवाला तत्त्व ध्रुव, यह ध्रुव तत्त्व जो है वह (ज्ञायकभाव) सम्यग्दर्शन का विषय है। आहाहा ! यह शुद्धनय का विषय है।

भाषा तो समझ में आये - ऐसी है परंतु भाव बापू जैसा है वैसा है। अरे ! जो करना चाहिए यह पहले करें नहीं न, शेष सभी व्यर्थ का बेकार। आहाहा !

क्या कहा ? त्रिकाली वस्तु को विषय बनानेवालानय, अथवा सम्यग्दृष्टि का विषय अभेद है। जिसका विषय एक समय की पर्याय भी नहीं। यह तो त्रिकाली एकाकाररूप अभेद, भेद बिना की चीज है प्रभु ! एकाकार एक स्वरूप, वह भी नित्य द्रव्य है, यह तो, कायम रहनेवाली चीज है, पलटती जो अवस्था, बदलती अवस्था है वह तो वर्तमान क्षणिक है, और कायम रहनेवाली चीज यह स्वयं तो नित्य और ध्रुव है। आहाहा !

आत्मा में दो प्रकार (है) एक बदलती अवस्था क्षण-क्षण में विचार बदलते (है) और एक कायम रहनेवाली चीज, कायम रहनेवाली चीज तो नित्य है, बदलती अवस्था अनित्य और पर्याय है। हिम्मतभाई ! किसी दिन सुना नहीं और किया नहीं एवं माथापच्ची करके मर गया, वहाँ अंत में कुछ सार नहीं निकला। आहाहा ! बापू ! जो निष्कर्ष आयेगा, जिसका झूठा है उसका झूठा निष्कर्ष आयेगा। (श्रोता :- जैसे अंक होंगे वैसा निष्कर्ष आये न) अंक एक-दो-चार-पाँच के अंक हों तो जोड़ आये परंतु शून्य रखे हों तो उसका जोड़ क्या आये ? (श्रोता :- शून्य का जोड़ शून्य) शून्य का जोड़ शून्य आये। आहाहाहा ! अंक भले रखे एक-एक-एक तब भी उसका जोड़ आये यह दश अंक, पन्द्रह अंक, बीस अंक आहाहा ! - ऐसा जिसने पर का किया, मैं पर का कर सकता हूँ। पर में करने का भाव हुआ हमारा राग और यह भी हमारी चीज है, ऐसे शून्य जिसने रखे हैं, उसका जोड़ शून्य आयेगा। आहाहा ! अर्थात आत्मा को लाभ नहीं मिले परंतु संसार आयेगा। आहाहा !

शुद्धनय का विषय, अर्थात सम्यग्दर्शन धर्म की पहली दशा, ऐसे धर्मी को विषय अभेद है, चैतन्य चैतन्य चैतन्य चैतन्य प्रकाश पुण्ज, एकाकार है एक स्वरूप है और वह नित्य है आहाहा ! उसकी दृष्टि में, सम्यग्दृष्टि की दृष्टि में अभेद एकाकार नित्य द्रव्य है। द्रव्य अर्थात वस्तु। उसकी दृष्टि में भेद दिखता नहीं। आहाहाहा ! यह तो मंत्र है बापा ! यह तो कहीं एकदम कहानी किस्सा कि चल जाये। अरे उसमें निजानंद का नाथ अंदर विराजमान है। आहाहा !

उसकी दृष्टि का विषय यह अभेद है एक स्वरूप है, नित्य है, ऐसी दृष्टि

से देखनेवाले को अभेद और एकाकार और नित्य देखनेवाले को, उसकी दृष्टि में भेद... अभेद देखनेवाले को भेद दिखता नहीं। है ? आहाहा ! क्या कहा यह ? ध्रुव प्रभु है, नित्यप्रभु, पर्याय अवस्था से बदलता है विचार दशा में परंतु वस्तु अपेक्षा तो ध्रुव है, यह ध्रुव है वह अभेद है। वह अभेद एकाकार नित्यद्रव्य को देखनेवाले तो अभेद को देखते हैं। तब अभेद देखनेवाले को भेद दिखता नहीं। आहाहा ! अंदर आत्मा में अनंतगुण है, वस्तु है वह आत्मा और गुण है वह उसकी शक्ति। यहाँ - ऐसा अंदर में भेद है, परंतु अभेद को देखनेवाले को यह भेद दिखता नहीं। आहाहा !

अरे ! अब ऐसी बातें बापू ! इसे समय चाहिए। एक मेट्रीक जैसी पाप की पढ़ाई के लिये... सुमनभाई ! पाप की पढ़ाई के लिये अमेरिका (में) तुम कितने भटके ? अमेरिका कि नहीं ? पीछे की कहाँ खबर है, दूसरे बहुत जाते हैं न ? लाखों रुपया खर्च करके अमेरिका और यह अमुक-तमुक अफ्रीका और। आहाहा ! परेशान-परेशान है। आहाहा !

यहाँ तो दूसरा कहना है कि संसार में ज्ञान के लिये जानने के लिये भी कितना समय इसे चाहिए है न ? वकील बनना हो तो एल. एल. बी. के लिये भी समय चाहिए कि नहीं ? डॉक्टर को एम. बी. बी. एस होना हो तो तो भी कुछ समय चाहिए कि नहीं ? तुम्हारे इस व्यापार में समय तो गया होगा न पाँच-सात-दश वर्ष। आहाहा ! तब... इसके पाप के धंधे के लिये कितना समय चाहिए तो आत्मा की पहचान के लिये कुछ समयनहीं निकालोगे तुम ? (श्रोता :- परंतु क्या करे ? सारे दिन ऑफिस क्या कहा ? (श्रोता :- सुबह आठ बजे जाये और रात को आठ बजे आये) इनके लड़के की बात की। सुबह जाये और ! अरे ! आहाहा !

जिसका स्वभाव अभेद और एकाकार है, इस वस्तु को जिसे अंदर देखना है उसे देखनेवाले को यहाँ धर्मी और सम्यग्दृष्टि कहते हैं और इन सम्यग्दृष्टि की अभेद ऊपर दृष्टि होने से... अभेद में गुणरूप भेद है, फिर भी अभेद ऊपर दृष्टि होने से उसे अभेद में भेद दिखता नहीं। अरे ऐसी बातें अब !

वस्तु जो ज्ञायक चैतन्य ज्योति है; चैतन्य के प्रकाश का पुण्ज प्रभु आत्मा, उसमें शरीर कर्म और यह देश यह तो है नहीं इसमें, परंतु इसमें पुण्य और पाप के भाव जो दया, दान, काम, क्रोध के (भाव) यह भी इसमें है नहीं, परंतु इस अभेद में, भेद भी नहीं। आहाहा ! समझ में आया कुछ ?

जिसकी चैतन्य प्रकाश सत्ता है। - ऐसा जो भगवान आत्मा, चैतन्य के प्रकाश का अस्तित्व जिसका त्रिकाल है, उसे देखनेवाले को, सम्यग्दृष्टि और सम्यग्ज्ञानी उसे देखनेवाले को, अभेद देखने पर उस उसमे भेद दिखता नहीं। आहाहा ! है ? उसकी

दृष्टि में भेद दिखता नहीं इसलिए उसकी दृष्टि में भेद अविद्यमान असत्यार्थ कहना चाहिए। आहाहा ! जिसने दृष्टि को संयोग ऊपर से हटाकर दया, दान के विकल्प से भी हटाकर एक समय के पर्याय भेद से भी हटाकर और गुण-गुणी के भेद से भी दृष्टि हटाकर और जिसने सम्यग्दर्शन में अभेद को देखा ! आहाहाहाहा ! अभी तो चोथे गुणस्थान की बात चलती है।

श्रावक किसे कहें यह सभी समझने जैसी बातें है बापा ! यह सभी सम्प्रदाय के श्रावक तो (समझने जैसे) हैं। यह मुनि किसे कहें बापू ? यह अलौकिक बात है भाई, आहाहा ! जिसे अतीन्द्रिय आनंद की दशा में बाढ़ आती हो; जैसे समुद्रमें ज्वार आता है जैंसे पानी का, इसप्रकार मुनिकी दशा में अतीन्द्रिय आनंद से भरा हुआ भगवान अतीन्द्रिय आनंद की बाढ़ आती (है) उन्हें। आहाहाहाहा ! उसे मुनि कहे बापू ! नग्न होकर घूमें एव कपड़े बदल दिए और बावा हो गये अतः साधु ? आहाहाहा !

अतीन्द्रिय आनंद का नाथ प्रभु सच्चिदानंद जिसके अनुभव में आया हैं उसने अभेद को देखा हैं, और जो अभेद में स्थित है अंदर में, अतीन्द्रिय आनंद में जम गया है उसे यहाँ साधु और मुनि कहा जाता है।

बहुत फर्क है परंतु यहाँ तो बात बात में फर्क है हिम्मतभाई ! मुम्बई में मिले - ऐसा नहीं वहाँ धूल मे मिले - ऐसा नहीं वहाँ बोटाद में वहाँ भटकते रहें। आहाहा ! यहाँ तो प्रभु - ऐसा कहते हैं कि ***जिसने आत्मा नित्यवस्तु, इसे जिसने देखी अंदर अभेद को, उस अभेद में भेद है अवश्य अंदर गुण भेद, गुणी की दृष्टि करने पर अंदर गुण हैं। परंतु अभेद में भेद दिखता नहीं। इसलिए वह अभेद की दृष्टि की अपेक्षा यह भेद दिखता नहीं। आहाहा ! अतः इसकी दृष्टि में भेद झूठा है - ऐसा कहा जाता है। आहाहा ! अभेद में भेद है, परंतु अभेद को देखनेवालों को भेद दिखता नहीं। भेद दिखता हो तो अभेद दिखता नहीं। आहाहा !***

ऐसा धरम... कोई कहे कि नया निकाला होगा - ऐसा ? बापू ! अनादि का मार्ग यह है, परंतु जगत में बाहर प्रसिद्ध न था, यहाँ अंधेर ही अंधेर खाता चलता था। आहाहा !

यहाँ तो कहते हैं, वर्तमान दशा और रागादि अथवा गुण भेद, उसको विषय व्यवहारनय का है। इस व्यवहार के विषय को झूठा कहा `नहीं' - ऐसा कहा क्यों ? कि जिसने अंदर गुण-गुणी के भेद का भी विकल्प छोड़ दिया है, और जिसने दृष्टि को त्रिकाली ध्रुव में जोड़ दी है, इस अभेद को देखने वाले को... उसके अनंत गुण-गुणी के गुण भेदरूप है फिर भी उस अभेद को देखनेवालों को भेद दिखता

नहीं। समझ में आया कुछ ? आहाहा !

ऐसी बातें हैं यह। - ऐसा उपदेश कहाँ से निकाला ? आहाहा ! यह भगवान का उपदेश है बापू ! आहा ! तीर्थंकर देव जैनशासन के शिरोमणी परमात्मा, उनकी वाणी में यह आया, यह जगत के सामने प्रसिद्ध होता है। आहाहा ! यहाँ कहने का आशय क्या है ? पर्याय को... पर्याय है, गुण-गुणी भेद भी हैं राग भी है यह सभी व्यवहार का विषय है। वर्तमान और त्रिकाली देखनेवाले को निश्चयनय का विषय है। तब त्रिकाली अभेद को देखने पर उसमें गुण-गुणी का भेद, अभेद को देखने पर भेद दिखता नहीं। आहाहा !

इसलिए अभेद को देखने पर भेद दिखता नहीं इसलिए उस भेद को व्यवहार का विषय समझकर `नहीं' - ऐसा कहा है, परंतु बिलकुल नहीं - ऐसा नहीं। व्यवहार का विषय है ही नहीं... यहाँ तो नहीं - ऐसा कहा है `परंतु' `नहीं' - ऐसा कहने का आशय क्या ? कि त्रिकाली में दृष्टि लगी है धर्मीकी, उसमें भेद दिखता नहीं, इसलिए उसे भेद नहीं और भेद झूठा है - ऐसा कहा। परंतु भेद अपेक्षा भेद और पर्याय अपेक्षा पर्याय नहीं - ऐसा नहीं।

इसकी बात करेगें। (प्रमाण वचन गुरुदेव !)